शोध साहित्य SHODH SAHITYA
INTERNATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL
(समसामयिक विषयों पर केंद्रित बहुविषयक मासिक ई-शोध पत्रिका)
E-ISSN 2584-2447
Year -1 Vol -5 March 2024

इक्कीसवीं सदी की हिंदी कहानियों में स्त्री - विमर्श के नवीनतम आयाम

[1]प्रेमलता भारती
शोधार्थी - हिंदी विभाग
[2]डॉ.के.सी.जैन - शोध निर्देशक
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, टीकमगढ़ (म.प्र.)

शोध सार

आज विशेषतः महिला कथाकारों ने स्वयं ही स्त्री जीवन पर कलम चलाकर अपना वह वर्चस्व हिन्दी साहित्य के उपन्यास जगत में बनाया है। जिसमें किसी भी प्रकार से यह नहीं कहा जा सकता कि उनके लेखन में कहीं किसी भी प्रकार का कोई ऐसा कथानक या कथ्यगत चित्रण है, जो विषयविशेष से भिन्न है। आज के विषाक्त परिवेश,भयावह परिस्थितियाँ और टूटने की विवशता को 21वीं सदी की महिला कथाकारों ने अपने कथा-साहित्य में उन्मुक्त होकर व्यक्त किया है। आज स्त्री की परिधि भी अत्यधिक परिवर्तित हो चुकी है। जिनमें सदी की सभी महिला कथाकारों ने अपना विशेष योगदान दिया है। स्वतंत्रता के बाद लोगों के जीवन यापन में कुछ परिवर्तन जरूर आये है। आधुनिकता शिक्षा प्राणली और भौतिक साधनों के कारण व्यक्ति जीवन में अनैतिकता और अन्याय की ओर बढ़ रहा है। जीवन में नवीन मान्यताएँ और आधुनिक मूल्यों ने सामंजस्य के स्थान पर लोगों में संघर्ष को जन्म दे दिया है। इन सभी क्षेत्रों में सबसे ज्यादा शोषित एवं पीडित स्त्री रही है।

बीज शब्द

शोषित, पीड़ित, वर्चस्व, संघर्ष, विकृतियाँ, अस्मिता

भूमिका

समाज और परिवार में निरंतर संघर्ष करने के कारण नारी की अन्य क्षमताओं में वाधा आ गयी है। उन्होंने जीवन को जिन संदर्भों व प्रसंगों में जिया है, उससे वे उत्तेजित होने की बजाय और भी अधिक कोमल व उदात्त होती गयी। यहीं कोमलता उनकी अभिव्यक्ति का भी

महत्वपूर्ण गुण है। प्रभा खेतान,मैत्रेयी पुष्पा, उषा प्रियंवदा, ममता कालिया, शिवानी, राजी सेठ और कृष्णा सोबती जैसी कई महिला कथाकारों ने अस्मिता की सजगता की दृष्टि से इस काल में नारी की सशक्तिकरण की छवि को पूर्णरूप से प्रदर्शित किया है। जिसको नारी लेखिकाओं की कलम ने स्थापित करने में पूरा सहयोग किया है - वह है नारी अस्तित्व एवं अस्मिता की सजगता नारी सक्षमी करण का यह दौर रहा है।

शोध विस्तार

नारी के सम्बन्ध में सदियों से स्थापित जो मान्यताएँ थी वर्जनाए थी, कटघरे थे और लक्ष्मण रेखा थी उनमें तीव्र गति से बदलाव आया। देश में प्रचलित धार्मिक विकृतियों, अंधविश्वासों के कारण नारी मुक्ति आन्दोलन केवल शहरों में उच्च वर्ग की स्त्रियों तक ही सीमित होकर रह गया। ग्रामीण क्षेत्रों में वह लगभग शून्य ही रहा है। किन्तु महिला कलम ने प्रत्येक क्षेत्र पर अपनी कलम का जादू दिखाकर स्त्री जाति को एक नवीनता प्रदान की है। अनेकों नाम आज साहित्य में हैं जो स्त्री को साहित्य में परम स्थान पर अवतरित करने में सफलता प्राप्त कर चुके हैं। यहाँ कुछ महिला कथाकारों के नाम मैं देना चाहूँगा, जिन्होंने अपनी कलम में सम्पूर्ण रूत्री संघर्ष एवं अस्मिता को भावनात्मक स्वरूप देकर साहित्य में स्थापित किया है –

उषा प्रियंवदा, मृदुला गर्ग, अलका सरावगी, जया जादवानी, नासिरा शर्मा, राजी सेठ, चित्रा मुदगल, ममता कालिया, मैत्रेयी पुष्पा, मधु कांकरिया, सुधा अरोड़ा, शिवानी, क्षमा शर्मा, सिम्मी हर्षिता, कृष्णा सोबती, मेहरून्निसा परवेज, मृणाल पाण्डेय, राजश्री राय, चन्द्रकान्ता, सुदर्शन प्रियदर्शिनी, कविता, अनामिका, मंजुल भगत, शरद सिंह, उषा राजे, चन्द्रकिरण सौनरिक्सा, सूर्यबाला, मालती जोशी, गीतांजलि श्री, मन्नु भण्डारी, दीप्ती खण्डेलवाल, रजनी परीकर, अमृता प्रीतम, श्रीमती रेखा शर्मा, रूकैया सखावत हुसैन, उर्मिला शिरीष, पद्मा सचदेव, नमिता सिंह, डॉ.कुसुम अंसल, कमल कुमार, सुशीला टाकभोरे, नीरजा माधव, जयंती रंगनाथन, ज्योत्सना मिलन, सुनीता जैन, गगल गिल, सुषम वेदी, सरस्वती प्रसाद, पूष्पा भारती, पूर्णिमा, रमणिका गुप्ता, सुभद्रा कुमारी चौहान, आदि महिला कलमकारों ने हिन्दी कथा साहित्य में अपना विशेष योगदान देकर कथाकर्म में से भरपूर स्त्री जीवन को स्थान दिया है।

इक्कीसवीं सदी की महिला कथाकारों ने नारी जीवन के तमाम अनुभवों को उस पथ पर अंकित किया है, जहां से उनके जीवन के सभी बंद दरवाजे प्रायः खुलते से लगते हैं। उनका यह मानना है कि स्त्री का सबसे बड़ा शत्रु उनकी अपनी देह है जो प्रत्येक स्थान पर उसको कमी का आभास कराती है। कहानी लेखक राजेंद्र यादव ने इनके उपन्यास 'तत्वमसि' में निहित नारी संवेदना व इनके व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि "तुम जैसी स्त्री के भीतर ऐसी बेचौनी भरी आकुल दुनिया इस हद, कहूँ कि अभी तक जीवंत और स्पंदित है। दूसरे, पता नहीं क्यों यह धारणा भी कहीं जमी बैठी है कि सुंदर स्त्रिया मानसिक रूप से किशोरी होती हैं और स्वयं ही देह तक अटकी नहीं रहती, बल्कि दूसरों को भी देह तक ही रोके रहती हैं – हालांकि इस तरह के उदाहरण में कम नहीं है जहा शारीरिक सौंदर्य की नश्वरता का क्रमशः गहराता बोध आध्यात्मिका और अधिक स्थायी सौन्दर्य की दिशा में खींचता है।"[1]

परन्तु समकालीन महिला कथाकारों ने अपनी सशक्त रचनात्मकता के साथ हिन्दी साहित्य परिदृश्य में स्त्री-पुरूष अंतर-संबंधों अभिशप्त जीवन पर भी खूब लिखा हैं। इस धरती पर कुदरत ने स्त्री और पुरुष दोनों को एक समान बुद्धि, शक्ति सामर्थ्य के साथ पैदा किया है। भारतीय समाज में स्त्रियों को सदा पुरुषों से कमतर आंका गया। अबला, कमजोर और निर्बल कहकर उसका उपहास उड़ाया गया। एक तरफ उसे देवी का दर्जा दिया गया तो, दूसरी तरफ उसके साथ अमानवीय व्यवहार किया गया। परंपरा और का सहारा लेकर पितृसत्तात्मक समाज ने उसे बेड़ियों में जकड़ कर रखा। धीरे-धीरे नारी की स्थिति बद से बदतर होती चली गयी। पुरुषों द्वारा नारी को उसके कोमल गुणों- दया, ममता, विश्वास, श्रद्धा आदि की आड़ में छला जाने लगा। रक्षा की आड़ में पितृसत्तात्मक समाज ने महिलाओं के अधिकारों को सीमित कर उन्हें पूरी तरह से पुरुषों पर आश्रित कर दिया। परिणामतः समाज में स्त्रियों की स्थिति और भी भयावह होती चली गयी।

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध से महिलाओं की सामाजिक स्थिति में सुधार हेतु वैश्विक स्तर पर अनेक आंदोलन किए गये, जिनमें स्वयं महिलाओं ने अपने अधिकारों के लिये बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया और स्त्रियों के उत्थान हेतु कई कदम भी उठाये। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद

शिक्षित व सक्षम महिलाओं के दृष्टिकोण में बदलाव आया। वे परिवार व समाज में अपनी भूमिका को लेकर शारीरिक व मानसिक रूप से संघर्ष करती रहीं। स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद स्त्रियों के स्वरूप में होने वाले परिवर्तनों के संदर्भ में डॉ.वीरेंद्र सिंह लिखते हैं - "एक ओर जहाँ परिवार का परंपरागत स्वरूप टूटा, वहीं दूसरी ओर स्त्री स्वतंत्रता के कारण नवयुवक स्त्रियों के स्वरूप में परिवर्तन आया। जो स्त्रियाँ आजीविका के साधन स्वयं जुटाती थीं उनकी मानसिकता में धीरे - व्यापक परिवर्तन आया और इस प्रकार उन्होंने जीवन और चिंतन के स्तर पर पुरुषों के समान ही स्वयं को प्रस्तुत करने की कोशिश की"।[2] स्पष्ट है कि देवी की उपाधि के बंधन को तोड़ती आज की बहुमुखी प्रतिभाशाली 'स्त्री' सतत संघर्ष का परिणाम है। जहाँ उसने स्वयं को पुरुष आलंबन से मुक्त एक स्वतंत्र अस्तित्व माना है।

21वीं सदी में स्त्रियों ने सफलता के विभिन्न आयामों को छुआ है। वह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी कामयाबी का परचम लहराते हुए पुरुषों के समकक्ष खड़ी ही नहीं बल्कि उनके वर्चस्व को भी चुनौती दे रही हैं। अपनी मेहनत के बल पर उसने स्वयं का एक अलग अस्तित्व व पहचान कायम की है। आज की स्त्री परंपरा के खोल को तोड़ कर नए-नए आयाम स्थापित करने में जुटी है। वे अब परंपरा व रीति-रिवाज के नाम पर किसी भी प्रकार का शोषण, दमन व अत्याचार सहन नहीं करती बल्कि अन्याय के खिलाफ पूरी ताकत के साथ संघर्ष करने को तत्पर है। आज की जागरूक स्त्री दूसरी स्त्रियों को भी जागरूक करने को तत्पर है। उसकी लज्जा, शर्म, सहनशीलता का स्थान उसके अस्तित्व के होने की जद्दोजहद ने ली। इस बदलते हुए परिदृश्य में हमारे युवा तेवर को अपनी कहानियों में रेखांकित किया और बदलते समय, परिवेश, परिस्थितियों व वातावरण के आधार पर स्त्रियों की बदलती छवियों को विश्लेषित किया है।

वर्तमान हिंदी कहानी स्त्री के सशक्त होते तमाम रूपों को उद्घाटित करती है जिनका अध्ययन करने से स्वतः सिद्ध हो जाता है कि स्त्री अब स्वयं को अबला नहीं सबला के रूप में स्थापित करती है। वे अपनी अन्तः-बाह्य स्थितियों पर चिंतन-मनन करती हुई अपने लिए एक नयी राह के अन्वेषण में लगी है। आज की कहानियों की अधिकांश नारी पात्र परंपरागत ढांचे को तोड़ देने को तत्पर हैं। कहानी 'घरौंदा नहीं, घर' की 'सरोजा' भी अपनी दुर्गति के

कारणों को जानकर उस पर विचार-मंथन करती है। वह सोचती है- "क्यों नहीं मैं लादे हुए बंधनो को तोड़ती हूँ? सच कहती हूँ कि अपने को तिल-तिल व मारने वाली मैं, क्यों डरती हूँ कि यदि मैं पति द्रोह करूंगी या उससे अलग हो जाऊंगी तो मेरे चारों ओर 'छिन्नाल' शब्द का भयंकर शोर मच जाएगा? मेरे सतीत्व कीचड़ के छींटे पड़ने लगेंगे। जैसे मेरा सारा व्यक्तित्व और अच्छाइयाँ ही समाप्त हो जाएंगी। इसीलिए तो मुझे बार-बार संदेह होता है कि मैं विद्रोह नहीं कर रहीं हूँ। विद्रोह करने की क्षमता मुझमें नहीं है। है तो मुझमें त्रिया-हठ। वरना मुझे विद्रोह तो कर देना चाहिए। यदि ऐसा नहीं करूंगी तो मेरी देह का मरणासन्न रूप में विष-मंथन होता रहेगा"।[3] अंततः सरोजा अपने पति और ससुर के अत्याचारों से तंग आकर, समाज की बनाई गयी खोखली मान्यताओं व परंपराओं को दरकिनार कर अपने पति का घर छोड देती है। इतना ही नहीं शिक्षित सरोजा अपने उन अधिकारों का प्रयोग करना भी जानती है। वह अपने पति को चुनौती देते हुए कहती है- "पत्नी सदा सहन करती है कि घर का नंगापन बाहर न जाये। पर आप तो अन्याय पर अन्याय कर रहें है। सुनिये, मैं तीन दिनों की मोहलत देती हूँ फिर मैं अदालत के दरवाजे खटखटाऊंगी"।[4] कहानी के अंत में ऊहापोह की स्थिति में फसी 'सरोज' एक सशक्त और सक्षम चरित्र के रूप में सामने आती है। वह सरकारी नौकरी प्राप्त कर अनामिका को गोद लेकर अपनी एक अलग दुनियाँ बसाती है। वास्तव में पुरुष स्त्री की निर्भरता ने उसे उसके हकों व अधिकारों से वंचित करने में बड़ी भूमिका निभाई है। किंतु आज की नारी ने शक्ति को पहचाना है। आज की स्त्री पुरुषों द्वारा उनसे छल किए जाने पर यह कदापि नही सोचती की अब उसका आगे क्या होगा। कहानी 'वाह किन्नी, वाह' की 'दिवाली' भी अपने पति के घिनौनेपन को सहने के लिए अभिशप्त नहीं है। वह अपने पति के किसी अन्य औरत से संबंध को जानकर टूटती व भिखरती नहीं है। बल्कि वह अपने आत्मसम्मान व अस्तित्व की रक्षा करते हुए कहती है - "मैं आप जैसे लम्पट पर थूकती हूँ। आपकी कितनी इज्जत की है, पर आप मक्कार व लुगाईखोर हैं। मैं मिनखोरी नहीं हूँ। केवल पेट भरने के लिए आपके पास नहीं रहूँगी। मेरे हाथों-पावों और शरीर में बड़ी ताकत है। मेहनत मजदूरी करके पेट भर लूंगी"।[5]

इस दौर की हिंदी कहानियों में 'स्त्री' शहरी हो या ग्रामीण वह प्रेमचंद की ठाकुर का कुआं कहानी की नायिका 'गंगी' के समान मूक प्रतिरोध दर्ज नहीं करती बल्कि अपने ऊपर

होने वाले छोटे बड़े सभी प्रकार के अत्याचारों का खुलकर प्रतिरोध व प्रतिकार करती नजर आती है। मजबूरी बस ना तो वो कोई काम करना चाहती है और न ही किसी को अपना फायदा उठाने देती है। एक ओर अनीता गोपेश की कहानी 'अन्ततः' की 'दिव्या' जो एक नाटक कंपनी में काम करती है। निर्देशक द्वारा दिये गए छोटे कपड़े को पहन कर नृत्य करने से इनकार कर देती है। व स्पष्ट शब्दों में कहती है - " सर ! माफ करिएगा मैं इस पोशाक में डांस नहीं कर पाऊँगी।"[6] निर्देशक द्वारा अनुबंधन का फायदा उठाये जाने पर वह और जोर देते हुए बोलती है - नंगा नाचने को कहें तो हम वो भी करें"।[7] वहीं दूसरी तरफ ग्रामीण परिवेश से संबंध रखने वाली कहानी 'सांच है प्रेम' की सब्जी बेचने वाली 'हँसली' बड़ी दबंगई के साथ 'रत्तू' से कहती है - "सुन रे रत्तू, मैं तेरी नीयत को जानती हूँ। तू जो लप्पर-चप्पर करता है न, वह कुत्ते की भौं-भौं जैसा लगता है। मुझे इधर तेरी आँखों में अजीब-सी चमक आने लगी है जैसे बिल्ली की आँखों में होती है, पर तुझे एक बात साफ-साफ कह दूं। हँसली ऐसी-वैसी लड़की नहीं है। सड़क का नलका नहीं है कि कोई भी आता-जाता पानी पी ले"।[8] कहानी में हँसली किसी भी मायने में अपने को कमजोर नहीं मानती। इस पितृसत्तात्मक समाज में एक स्त्री का पुरुष के बिना अकेले रहना बड़ा ही कठिन है। लेकिन हँसली पति और पिता के अभाव में भी अपनी बूढ़ी माँ के साथ गाँव में बड़ी गरिमा और सम्मान के साथ रहते हुए लोगों की ललचाई नजरों से खुद को बचाती है। वह अपने अस्तित्व पर कुदृष्टि डालने वाले पुरुषों को मुहतोड़ जवाब देते हुए स्पष्ट कहती है कि- "मुझे कोई सड़क की फेंकी हुई रोटी न समझे कि उठाई और खा ली। मुझे रात का फेंका हुआ आटा न जाने कि घर जाकर तवे पर बिछा दिया"।[9] कहानीकार ने इस कहानी के माध्यम से आज की सबल नारी का रूप प्रस्तुत किया है, जो गलत होने पर भ्रष्ट हवलदार या पुलिस वाले को भी फटकार लगाने से गुरेज़ नहीं करती।

आज लड़कियां किसी भी मायने में लड़कों से कम नहीं हैं। वे अपनी शिक्षा और जागरुता के बल पर अपने ससुराल के साथ-साथ अपने माता-पिता के प्रति भी जिम्मेदारियों का निर्वहन उनका सहारा बनकर कर रहीं हैं। घर में भाई के ना होने पर वे, बेटी होने के वास्तविक उत्तरदायित्व को निभाना चाहती हैं, इसके लिए वह पति और ससुराल वालों से लड़ने का सामर्थ्य भी रखती हैं। कहानी 'जाग उठी है नारी' की नायिका 'भूमि' वर्तमान स्त्री के

इसी रूप का प्रतीक बनकर उभरती है। जो अपने बूढ़े माँ-बाप के जीवन निर्वहन का सहारा बनने हेतु, पति 'शोभन' के द्वारा दिए गए तलाक के पेपर तक साइन कर देती है। वह कोर्ट में बड़े तर्कपूर्ण ढंग से अपनी बातों को जज के सामने रखती है और शोभन के द्वारा लगाए गए झूठे आरोपों को गलत भी साबित करती है। वह कहती है- "मेरे ऊपर लगाया गया आरोप बेबुनियाद है जज साहब। मैं कोई पैसा की कमाई का नहीं लुटाती। मैं तो अपनी तनख्वाह में से बेसहारा माँ-बाप की मदद करके अपना फर्ज अदा करती हूँ। जिस माँ-बाप ने पाल-पोसकर मुझे बड़ा किया, पढ़ा लिखाकर नौकरी लगवाई। आज वे बूढ़े और लाचार हैं। उनकी मेरे सिवा कोई और संतान नहीं तो क्या मैं भी अपने कर्त्तव्यों से बिमुख हो जाऊँ। नहीं जज साहब! मैं ऐसा नहीं कर सकती। समाज पतन की ओर जाएगा। यदि बेटी माँ-बाप का सहारा नहीं बन सकती तो कौन देगा परिवार में कन्याओं को जन्म? कन्या भ्रूण हत्याएँ होंगी। अब नारी को ही कुछ करना होगा, उसे जागना होगा, आज मै जाग उठी हूँ, कल कोई और जागेगा"।[10] आज स्त्रियों की इसी सोच ने बेटियों को भी घर-परिवार में बेटों के समान अधिकार व सम्मान दिलाया है। आज वें घर में बोझ नहीं बल्कि परिवार का बहुमूल्य हिस्सा है।

वर्तमान हिंदी कहानीकारों ने अपनी कहानी के माध्यम से न केवल विवाहित अथवा अविवाहित स्त्रियों के बदलते सशक्त स्वरूप का चित्रण किया है। बल्कि विधवा तथा तलाकसुदा स्त्रियों की बदलती छवि को पेश करते हुए उनके पुनर्विवाह के प्रति परंपरागत मानसिकता को परिवर्तित करने में भी सफलता हासिल की है। कहानी 'आंच' की बाल विधवा 'सुमन' उसकी जमीन हड़पने और इज्जत लूटने आये पंडित जगन्नाथ और ठेकेदार माणिकलाल की आँखों में मिर्च झोंक देती है। अपने शारीरिक व मानसिक उत्पीड़न के बावजूद वह टूटती नही बल्कि अपने प्रेमी दिलीप से विवाह करने का फैसला लेती है। जब दिलीप गाँव वालों के डर से सुमन को गाँव छोड़कर भाग चलने के लिए कहता है तो सुमन पलायन की अपेक्षा संघर्ष का रास्ता अपनाती है और गाँव में ही रहने का निर्णय लेती है। जो एक निर्बल व सहमी नहीं बल्कि एक सबल 'विधवा' के प्रतिरोध की अभिव्यक्ति है। यह सच है की वर्तमान सदी में महिलाओं ने अनेक कीर्तिमान गढ़े हैं। आज स्त्रियों ने समाज में अपनी स्वतंत्रता, अपने वर्चस्व का परचम लहराया है। उसने पुरुष सत्ता के बरक्स अपना एक अलग एवं अहम अस्तित्व कायम किया है।

अतः वर्तमान हिंदी कहानियाँ स्त्री के इस 'उच्छृंखल' रूप को भी बड़ी बेबाकी से प्रस्तुत करती हैं। कहानी 'संत्रासित मुखौटा' की 'रीटा' के बिचार वर्तमान के उस रूप पर एक तीखा व्यंग करती है, जो पुरुष जैसा चरित्र धारण कर उसके पदचिह्नों पर चलने को उतावली हैं। वह कहती है-"कभी-कभी लगता है कि भूख-प्यास से भी अधिक महत्वपूर्ण है काम- वासना। पुरुषों में होड़ मची है कि रोज कितनी औरतों को स्पर्श करना है। मन ही मन हिसाब लगाते हैं। घर में बीबी है तो क्या, वो तो रोज की बात है। मगर नई-नई लड़कियां, जवान जिस्म, आमंत्रित करते अंग-उघाडू वस्त्र, यही चलन होता जा रहा है। पुरुष मनोवृत्ति भी कामुक होती जा रही है। लड़कियां भी अपने आपको पुरुषों को आकर्षित करने का साधन समझने लगी हैं। कहीं-कहीं लड़कियां भी छेड़ खानी का आनंद उठाने लगी हैं। आखिर वें भी इंसान हैं। एंजॉय करने का हक सिर्फ मर्दों को नहीं है"।[11] वहीं अंजु दुआ जैमिनी की कहानी 'बताना जरूरी है क्या' आज की उच्छृंखल स्त्री को प्रस्तुत करती है। कहानी की नायिका इतनी बोल्ड है कि बैंककर्मी द्वारा उसके प्रोफेशन के बारे में पूछे जाने पर वह कहती है- "डोंट राइट हाउसवाइफ। मैं प्रोफेशन में हूँ। आई एम प्रोफेशनल कॉलगर्ल"।[12] इतना ही नहीं वह आगे कहती है- "मेरी कोई मजबूरी नहीं थी। मेरे साथ कोई हादशा नहीं हुआ। मुझे इस पेशे में किसी ने जबरदस्ती नहीं धकेला। मैं इसमे अपनी मर्जी से आई हूँ। अमीर खानदान से हूँ सो धन की कोई कमी नहीं थी। सिर्फ मस्ती के लिए मैंने इस प्रोफेशन में कदम रखा"।[13] स्पष्ट है कि 21वीं सदी की यह नारी न तो गरीबी के कारण इस धंधे में आयी न तो उसकी कोई अन्य विवशता है। वह सिर्फ अपने शौक व एंजॉयमेंट के लिए यह कार्य करती है। वास्तव में यह आज के समय की सबसे बड़ी सच्चाई है। फर्राटेदार अंग्रेजी बोलने वाली अधिकांश कॉलगर्ल संपन्न परिवारों की होती हैं। जो कम समय में अधिक से अधिक पैसा कमा लेने और आसानी से आधुनिक सुख सुविधाओं के भोग की ख़्वाहिश में इस रास्ते को सहर्ष स्वीकार करती हैं।

वस्तुतः यह सत्य है की स्त्रियों की भी अपनी भौतिक व शारीरिक इच्छाएँ व महत्वाकांक्षाएँ होती हैं और उनकी पूर्ति आवश्यक भी है। किन्तु विडंबना यह है कि आज शिक्षित एवं जागरूक स्त्रियाँ भी इनकी पूर्ति के लिए गलत रास्ते अख़्तियार कर रहीं है। यहाँ तक की अपने कैरियर को ऊँचाइयों पर ले जाने के लिए अपनी देह का उपयोग करने से भी नहीं कतराती। कहानी 'वह लड़की' की 'रोजी' ऐसी ही स्त्री है जो अपने बॉस के यौन आमंत्रण

कर प्रमोशन पा लेती है। तो वहीं कविता की कहानी 'उस पार की रोशनी' की वर्तिका गृहस्थ नारी के उस रूप को उजागर करती है, जिसके लिए अपनी जिंदगी और महत्वाकांक्षाएँ इतनी जरूरी है कि वह अपने पति सूरज को धोखा दे रवि से संबंध बनाती है।

निष्कर्ष

इस प्रकार वर्तमान समय की ऐसी अनेक कहानियाँ है जो स्त्री-स्वतंत्रता व स्त्री-मुक्ति के नाम पर उच्छृंखल बहोती स्त्रियों के रूपों को उजागर करती है। हम कह सकते हैं कि 21वीं सदी की हिंदी कहानियां वर्तमान स्त्री के बदलते विभिन्न रंगों को प्रस्तुत करती है। एक ओर वर्तमान हिंदी कहानियां स्त्रियों के सशक्त होते विभिन्न प्रतिरूपों को उद्घाटित करती हैं तो वहीं दूसरी ओर उसके पथ-भ्रष्ट होते रूपों को भी पेश करती हैं।

संदर्भ-ग्रंथ सूची

1. शर्मा गोपालकृष्ण 'फिरोजपूरी', मोम के रिश्ते (कहानी संग्रह), वर्ष (2011), कल्पना प्रकाशन, दिल्ली,पृ.124.
2. डॉ. यादव वीरेंद्र सिंह, हिंदी कथा साहित्य में पारिवारिक विघटन, वर्ष (2010), नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.121
3. शर्मा यादवेंद्र 'चंद्र'/वाह किन्नी, वाह (कहानी संग्रह)/पृ.128.
4. शर्मा यादवेंद्र चंद्र/वाह किन्नी, वाह,(कहानी संग्रह)/पृ.99
5. शर्मा यादवेंद्र 'चंद्र'/वाह किन्नी, वाह (कहानी संग्रह), पृ.44.
6. गोपेश अनीता/कित्ता पानी (कहानी संग्रह)/पृ.53.
7. गोपेश अनीता/कित्ता पानी (कहानी संग्रह)/पृ.53.
8. शर्मा, यादवेंद्र 'चंद्र/वाह किन्नी, वाह (कहानी संग्रह)/पृ.94.
9. शर्मा, यादवेंद्र चंद्र/वाह किन्नी, वाह (कहानी संग्रह) पृ.94.
10. शर्मा गोपालकृष्ण 'फिरोजपूरी'/मोम के रिश्ते (कहानी संग्रह) पृ.34.
11. जैमिनी अंजु दुआ/सीली दीवार (कहानी संग्रह)/पृ.28.
12. जैमिनी अंजु दुआ/क्या गुनाह किया (कहानी संग्रह)/पृ.27.
13. जैमिनी अंजु दुआ/क्या गुनाह किया(कहानी संग्रह)/पृ.29.